

कालिदास के काव्यों में प्रकृति चित्रण: एक समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ. परिमल मंडल

असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, स्वर्णमयी जोगेंद्रनाथ महाविद्यालय, अमदाबाद, नंदीग्राम, पूर्वा मेदिनीपुर, पश्चिम बंगाल

सार (Abstract)

कालिदास को संस्कृत साहित्य में प्रकृति का सर्वाधिक संवेदनशील और समन्वयकारी चित्रण माना जाता है। यह शोध-पत्र उनके चार प्रमुख काव्यों (ऋतुसंहार, मेघदूत, कुमारसम्भव और रघुवंश) में प्रकृति-चित्रण का विश्लेषणात्मक साहित्यिक अध्ययन करता है। अध्ययन का आधार पाठ-केन्द्रित सूक्ष्म पठन (close reading), विषयगत वर्गीकरण और तुलनात्मक विश्लेषण है। पत्र में पूर्ववर्ती हिन्दी, संस्कृत और अंग्रेजी आलोचना की समीक्षा की गई है और रस-सिद्धान्त, पारिस्थितिक आलोचना, सांस्कृतिक-ऐतिहासिक और ग्रहण-सिद्धान्त के दृष्टिकोणों से प्रकृति-चित्रण का मूल्यांकन हुआ है। निष्कर्ष यह है कि कालिदास की प्रकृति न तो केवल पृष्ठभूमि है, न केवल अलंकरण। वह भावों की सहचरी, कथा की संचालक, सांस्कृतिक स्मृति की वाहक और मनुष्य के साथ सहअस्तित्व की एक सजीव सत्ता है।

कूटशब्द: कालिदास, प्रकृति चित्रण, ऋतुसंहार, मेघदूत, कुमारसम्भव, रघुवंश, मानवीकरण, रस-सिद्धान्त, पारिस्थितिक आलोचना

1. प्रस्तावना

भारतीय काव्य-परम्परा में प्रकृति का स्थान वेदों से ही सुदृढ़ रहा है। ऋग्वेद के उषा, पर्जन्य और अरण्यानी-सूक्तों में प्राकृतिक शक्तियाँ देवत्व के रूप में स्तुत हैं। वाल्मीकि की रामायण में प्रकृति कथा के भीतर भाव-सहचर के रूप में उपस्थित है। इसी परम्परा का परिष्कृत और कलात्मक शिखर कालिदास के काव्यों में दिखता है [1,2]। संस्कृत साहित्य के इतिहासकारों ने कालिदास को केवल कवि नहीं, बल्कि 'कवि-कुलगुरु' की प्रतिष्ठा दी है। उनकी उपमाओं की प्रशंसा में प्रचलित उक्ति 'उपमा कालिदासस्य' इसी सम्मान का प्रमाण है [1,3]।

कालिदास का काल विद्वानों के बीच विवादित है। सामान्यतः उन्हें गुप्तकाल के आस-पास, चौथी-पाँचवीं शताब्दी ईसवी में रखा जाता है, यद्यपि कुछ विद्वान उन्हें प्रथम शताब्दी ई.पू. तक ले जाते हैं [3,4,5]। काल-निर्धारण के इस मतभेद के बावजूद उनके काव्य-सौन्दर्य पर विद्वानों में असाधारण सहमति है। पाश्चात्य विद्वानों ने भी उनकी काव्य-प्रतिभा को उच्च स्थान दिया है [4,6]।

कालिदास के काव्यों में प्रकृति-चित्रण का महत्त्व तीन कारणों से विशेष है। पहला, उनके काव्य-संसार में पर्वत, नदी, वृक्ष, लता, मेघ, ऋतु और पशु-पक्षी घटनाओं के मूक साक्षी नहीं हैं। वे संवेदनशील सहभागी हैं। दूसरा, प्रकृति के वर्णन में उनकी भाषा, छन्द और अलंकार-योजना ऐसी संगति रखती है कि वर्णन और भाव अभिन्न प्रतीत होते हैं। तीसरा, उनका प्रकृति-बोध मनुष्य और सृष्टि के बीच किसी शत्रुता या प्रभुत्व-सम्बन्ध पर नहीं, अन्तर्निर्भरता पर आधारित है। इस कारण आज के पर्यावरण-चिन्तन के सन्दर्भ में भी उनका पाठ प्रासंगिक है [7,8]।

इस शोध-पत्र का प्रयास कालिदास की प्रकृति-दृष्टि को पूर्ववर्ती आलोचकीय विमर्श के साथ रखकर परखना है, ताकि यह अध्ययन अपने से पहले की स्थापनाओं का पुनरुक्ति-मात्र न रहकर उनका आलोचनात्मक संश्लेषण बन सके।

2. शोध-समस्या, उद्देश्य और प्रश्न

2.1 शोध-समस्या

कालिदास की प्रकृति-चित्रण-कला पर पर्याप्त लिखा गया है, किन्तु अधिकांश अध्ययन या तो किसी एक कृति (विशेषतः मेघदूत या शाकुन्तल) तक सीमित हैं, या वर्णनात्मक प्रशंसा तक। इन सभी काव्यों में प्रकृति की भूमिका के बीच विकास-क्रम, सम्बन्ध और वैचारिक संगति का तुलनात्मक विश्लेषण अपेक्षाकृत कम हुआ है। साथ ही, परम्परागत रसवादी दृष्टि और आधुनिक पारिस्थितिक दृष्टि के बीच संवाद भी सीमित रहा है।

2.2 उद्देश्य

1. कालिदास के चार प्रमुख काव्यों में प्रकृति-चित्रण के स्वरूपों को पहचानना और वर्गीकृत करना।
2. प्रकृति के भाव-सहचर, उद्दीपन, प्रतीक और मानवीकृत रूपों का विश्लेषण करना।
3. पूर्ववर्ती शोध और आलोचना की समीक्षा कर उसके निष्कर्षों की तुलना करना।
4. विभिन्न आलोचनात्मक दृष्टिकोणों से कालिदास की प्रकृति-दृष्टि का मूल्यांकन करना।

2.3 शोध-प्रश्न

1. कालिदास के काव्यों में प्रकृति किन-किन रूपों में प्रकट होती है?
2. क्या चारों काव्यों में प्रकृति की भूमिका समान है, या कृति-विशेष के अनुसार बदलती है?
3. रस-निष्पत्ति में प्रकृति-चित्रण का क्या योगदान है?
4. पारिस्थितिक और सांस्कृतिक दृष्टि से कालिदास की प्रकृति-चेतना का क्या अर्थ निकलता है?

3. शोध-पद्धति

यह अध्ययन विश्लेषणात्मक साहित्यिक शोध की पद्धति पर आधारित है। इसमें पद्धति के चार चरण अपनाए गए।

पहला चरण, पाठ-चयन। ऋतुसंहार, मेघदूत, कुमारसम्भव और रघुवंश को अध्ययन-क्षेत्र बनाया गया। शाकुन्तल आदि नाटकों का उपयोग केवल तुलनात्मक सन्दर्भ के रूप में हुआ। पाठ के लिए प्रमाणित संस्करणों और टीकाओं (विशेषतः मल्लिनाथ की परम्परा) तथा हिन्दी-संस्करणों का उपयोग हुआ [9,10]। मूल संस्कृत पंक्तियाँ अत्यन्त सीमित और संकेत-रूप में उद्धृत हैं।

दूसरा चरण, सूक्ष्म पठन। प्रत्येक कृति में प्रकृति-सम्बन्धी प्रसंगों की पहचान की गई और उनके सन्दर्भ, भाव-स्थिति, उपमान-योजना और भाषिक संरचना का विश्लेषण किया गया।

तीसरा चरण, विषयगत वर्गीकरण। प्रकृति-चित्रण को पाँच वर्गों में रखा गया: आलम्बन रूप, उद्दीपन रूप, मानवीकरण, प्रतीक-योजना और उपमान-रूप।

चौथा चरण, समीक्षा और तुलना। पूर्ववर्ती आलोचकों के मतों को उनके तर्क और निष्कर्ष के आधार पर एक-दूसरे से तौला गया, और कृति-प्रमाण से उनकी परीक्षा की गई।

इस पद्धति की सीमा यह है कि साहित्यिक विश्लेषण में व्याख्या का तत्त्व अनिवार्य है, अतः निष्कर्ष प्रमाण-आधारित तर्क हैं, प्रयोगात्मक सिद्धान्त नहीं।

4. सम्बन्धित शोध और आलोचना की समीक्षा

4.1 परम्परागत संस्कृत आलोचना

संस्कृत काव्यशास्त्र में प्रकृति का स्थान मुख्यतः उद्दीपन-विभाव के अन्तर्गत निर्धारित हुआ। आनन्दवर्धन ने ध्वनि-सिद्धान्त में काव्य की आत्मा व्यंग्यार्थ में मानी और यह स्वीकार किया कि महाकवि के प्रयोग में बाह्य वर्णन भी रस-ध्वनि का अंग बन जाता है [11]। पी. वी. काणे ने अपने काव्यशास्त्र-इतिहास में महाकाव्य-लक्षणों के अन्तर्गत ऋतु, सूर्योदय, पर्वत, नदी, समुद्र आदि के वर्णन को महाकाव्य का अपेक्षित अंग बताया है। उनके निष्कर्ष के अनुसार कालिदास ने इस काव्यशास्त्रीय रूढ़ि को केवल पालन नहीं किया, बल्कि उसे भावात्मक जीवन्तता दी [12]।

परिणाम: परम्परागत आलोचना में प्रकृति-वर्णन को काव्य का अपेक्षित अंग माना गया, किन्तु कालिदास इस अपेक्षा को पार कर जाते हैं।

4.2 हिन्दी में संस्कृत साहित्येतिहास-लेखन

बलदेव उपाध्याय ने संस्कृत साहित्य के इतिहास में कालिदास की रचनाओं का विवेचन करते हुए प्रकृति-वर्णन को उनकी कला का विशिष्ट पक्ष कहा है। उनके अनुसार कालिदास की प्रकृति सजीव, सहानुभूतिपूर्ण और भावसंयुक्त है [1]। कपिलदेव द्विवेदी और वाचस्पति गैरोला के इतिहास-ग्रन्थ भी इसी मत की पुष्टि करते हैं। उनमें ऋतुसंहार को कवि की आरम्भिक और वर्णन-प्रधान कृति तथा मेघदूत को प्रकृति और विरह के अद्भुत मिलन की कृति माना गया है [2,3]।

परिणाम: हिन्दी साहित्येतिहासकारों में सहमति है कि ऋतुसंहार से मेघदूत और कुमारसम्भव तक प्रकृति-चित्रण का क्रमिक परिपक्व होता रूप दिखाई देता है।

4.3 हिन्दी आलोचना और रचनात्मक पाठ

हजारीप्रसाद द्विवेदी ने कालिदास की सौन्दर्य-दृष्टि को 'लालित्य' की अवधारणा से जोड़कर देखा। उनके अनुसार कालिदास का सौन्दर्य-बोध शरीर, प्रकृति और संस्कृति को एक सूत्र में बाँधता है [13]। मेघदूत पर उनके निबन्ध-पाठ में यह प्रतिपादित है कि प्रकृति का यह काव्य मानवीय वियोग-वेदना का सार्वभौम सन्दर्भ है, केवल एक यक्ष की कथा नहीं [14]। भगवतशरण उपाध्याय ने कालिदास-साहित्य में दिखाई देने वाले वनस्पति, पशु-पक्षी, भौगोलिक और सांस्कृतिक तथ्यों का संकलन कर यह दिखाया कि उनका प्रकृति-वर्णन प्रत्यक्ष अवलोकन पर आधारित है, कोरी कल्पना पर नहीं [15]। रामचन्द्र शुक्ल की काव्य-दृष्टि में भी, जिसमें बाह्य-प्रकृति का साक्षात्कार काव्य का महत्वपूर्ण आधार है, इस अध्ययन के लिए वैचारिक सहायता मिलती है [16]। रामधारी सिंह दिनकर ने भारतीय संस्कृति के विकास के सन्दर्भ में शास्त्रीय काल की कला-समृद्धि का विवेचन किया, जिससे कालिदास-युगीन सौन्दर्य-बोध की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि स्पष्ट होती है [17]।

आधुनिक हिन्दी साहित्य में मोहन राकेश के नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' में कालिदास और मेघ-प्रकृति का सम्बन्ध पुनर्व्याख्यायित हुआ है। वहाँ 'आषाढ़' रचनात्मकता, प्रेम और अभाव, तीनों का रूपक बन जाता है [18]। यह आधुनिक ग्रहण-परम्परा का उदाहरण है, जिससे स्पष्ट होता है कि कालिदास की प्रकृति-दृष्टि नई रचनाशीलता को भी प्रेरित करती रही।

परिणाम: हिन्दी आलोचना ने प्रकृति को कालिदास के यहाँ लालित्य, भावसंगति और सांस्कृतिक स्मृति का अंग माना। यथार्थ-अवलोकन और भावात्मक व्याख्या, दोनों को एक साथ रेखांकित किया गया।

4.4 प्राच्यविद्या और अंग्रेजी शोध

मैकडोनेल ने कालिदास की प्रकृति-निरूपण-क्षमता और उपमा-कौशल की प्रशंसा की [4]। कीथ ने कालिदास के काव्य और नाटक दोनों में प्रकृति और मानवीय भाव के अन्तर्संबंध को रेखांकित किया, यद्यपि उनकी दृष्टि कहीं-कहीं औपनिवेशिक मूल्यांकन-पद्धति से प्रभावित दिखती है [5]। राइडर की अनुवाद-भूमिकाएँ प्रकृति और मानव के सम्बन्ध को कालिदास की केन्द्रीय विशेषता के रूप में प्रस्तुत करती हैं [6]। विंटरनित्ज ने कालिदास की काव्य-कला में प्रकृति-वर्णन की सूक्ष्मता और संगीतमयता पर बल दिया [19]। मिराशी ने कालिदास के जीवन, काल और कृतियों का विस्तृत विवेचन किया तथा वर्णन-सामग्री में भौगोलिक सटीकता की ओर ध्यान दिलाया [20]। इंगल्स द्वारा प्रस्तुत संस्कृत काव्य-संकलन दिखाता है कि संस्कृत मुक्तक-परम्परा में प्रकृति एक व्यापक साझा भावकोश थी, और कालिदास इसी परम्परा के सर्वश्रेष्ठ प्रतिनिधि माने जा सकते हैं [21]। ब. स. मिलर द्वारा सम्पादित संग्रह में कालिदास के नाटकों के अध्ययन से प्रकृति और स्मृति के सम्बन्ध पर नई दृष्टि मिलती है [22]। रोमिला थापर ने शकुन्तला-कथा के विविध पाठों का इतिहास-सम्मत अध्ययन कर दिखाया कि प्रकृति और आश्रम-जीवन का चित्रण सामाजिक-सांस्कृतिक अर्थों से जुड़ा है [23]। शेल्डन पोलॉक ने संस्कृत काव्य-संस्कृति के व्यापक ऐतिहासिक सन्दर्भ में यह तर्क दिया कि कालिदास-युगीन काव्य की भाषा और सौन्दर्य-दृष्टि एक सुविचारित सांस्कृतिक-राजनीतिक परियोजना का भी अंग थी [24]।

परिणाम: अंग्रेजी-शोध ने कालिदास के प्रकृति-चित्रण को काव्य-कौशल, सांस्कृतिक स्मृति और ऐतिहासिक सन्दर्भ, इन तीन स्तरों पर परखा, जबकि हिन्दी शोध भाव-सौन्दर्य पर अधिक केन्द्रित रहा।

4.5 पारिस्थितिक और तुलनात्मक अध्ययन

लॉरेस ब्यूएल की 'पर्यावरणीय कल्पना' की अवधारणा साहित्य में प्रकृति को केवल मानव-मंच के रूप में नहीं, स्वतन्त्र अस्तित्व के रूप में देखने का आग्रह करती है [25]। फ्रांसिस जिम्मेरमान ने आयुर्वेद और प्राचीन भारतीय पारिस्थितिक चिन्तन के सम्बन्ध का अध्ययन किया, जिससे भारतीय संस्कृति में वनस्पति, जल और जलवायु के प्रति सूक्ष्म बोध का सन्दर्भ मिलता है [26]। गाडगिल और गुहा का अध्ययन भारतीय उपमहाद्वीप में मनुष्य-प्रकृति सम्बन्ध के ऐतिहासिक स्वरूप की पृष्ठभूमि देता है [27]। तुलनात्मक दृष्टि से रामानुजन द्वारा अनूदित प्राचीन तमिल संगम-कविता में भूदृश्य (तिणै) और भाव का संघटित सम्बन्ध दिखता है, जो संस्कृत काव्य में ऋतु-भाव सम्बन्ध से तुलनीय है [28]।

परिणाम: पारिस्थितिक और तुलनात्मक अध्ययन कालिदास की प्रकृति-दृष्टि को व्यापक भारतीय काव्य-परम्परा का अंग सिद्ध करते हैं, पर उसकी विशिष्टता यह है कि वहाँ भूदृश्य केवल भाव-संकेत नहीं, गतिशील घटना-तत्त्व भी है।

4.6 समीक्षा का समेकित निष्कर्ष

उपर्युक्त समीक्षा से तीन अन्तर्विरोधी और पूरक प्रवृत्तियाँ उभरती हैं। पहली, परम्परागत और हिन्दी आलोचना भाव-सौन्दर्य पर बल देती है। दूसरी, प्राच्यविद्या-शोध सांस्कृतिक और ऐतिहासिक सन्दर्भ पर। तीसरी, आधुनिक पारिस्थितिक विमर्श प्रकृति की स्वतन्त्र सत्ता पर। इन तीनों के बीच सेतु-निर्माण की आवश्यकता है, और यह पत्र उसी दिशा में अगले खण्डों में अग्रसर होता है।

5. कृतिवार विश्लेषण

5.1 ऋतुसंहारः ऋतु-चक्र का काव्य

ऋतुसंहार छः सर्गों का काव्य है और प्रत्येक सर्ग एक ऋतु को समर्पित है। यह संरचनागत तथ्य ही उसे कालिदास की सबसे स्पष्ट प्रकृति-केन्द्रित कृति बनाता है। यहाँ ग्रीष्म से आरम्भ कर वर्षा, शरद, हेमन्त, शिशिर और वसन्त का क्रम चलता है। इस प्रकार कृति का शत-प्रतिशत अंश प्रकृति के अधीन संरचित है [1,9]।

ग्रीष्म-वर्णन के आरम्भ में प्रचण्ड सूर्य और स्पृहणीय चन्द्रमा का द्वन्द्व दिखता है ('प्रचण्डसूर्यः स्पृहणीयचन्द्रमाः'), जहाँ प्रकृति की कठोरता और मनुष्य की शीतलता-कामना एक साथ प्रकट होती है। शरद के चित्रण में काशपुष्पों को वस्त्र, खिले कमल को मुख और हंसों के कलरव को नूपुरध्वनि मानकर ('काशांशुका विकचपद्ममनोज्ञवक्त्रा') शरद-ऋतु को एक सजी हुई नायिका के रूप में देखा गया है। वसन्त के प्रसंग में 'सर्वं प्रिये चारुतरं वसन्ते' की भावना पूरी प्रकृति में प्रेम के उत्कर्ष को व्यक्त करती है।

विश्लेषण से तीन बातें स्पष्ट होती हैं।

पहली, ऋतुसंहार में प्रकृति का नारी-रूप में मानवीकरण प्रमुख उपकरण है, जिसमें प्रत्येक ऋतु प्रेमी-प्रेमिका के भावों की पृष्ठभूमि भी है और उनकी सहभागी भी।

दूसरी, यहाँ प्रकृति और शृंगार का सम्बन्ध लगभग एकरैखिक है। हर ऋतु प्रेमी-युगल के संयोग-वियोग को किसी न किसी रूप में प्रभावित करती है। इसी कारण आलोचकों ने इसे कवि की आरम्भिक और अपेक्षाकृत कम जटिल कृति माना है [2,3]।

तीसरी, कृति के ऋतु-क्रम में कवि ने भारतीय उपमहाद्वीप के जलवायु-चक्र का सूक्ष्म बोध दिखाया है। यह उनके प्रत्यक्ष अवलोकन का संकेत है [15]।

कृति की सीमा यह है कि कथानक के अभाव में यह वर्णन-प्रधान बनी रहती है। उसमें कवि की परवर्ती कृतियों जैसी भाव-गहनता नहीं दिखती, पर प्रकृति-दृष्टि के बीज-रूप उसी में मिल जाते हैं।

5.2 मेघदूतः प्रकृति का दूतत्व

मेघदूत कालिदास की सबसे प्रसिद्ध प्रकृति-आधारित कृति है। इसके दो खण्ड हैं, पूर्वमेघ और उत्तरमेघ, और पाठ-परम्परा में श्लोक-संख्या संस्करणों के अनुसार लगभग एक सौ दस से एक सौ बीस के बीच मिलती है [9,10]। कथा का सूत्र यह है कि कर्तव्य-प्रमाद के कारण शापित एक यक्ष रामगिरि पर निर्वासन में है और आषाढ़ के प्रथम दिवस पर आकाश में उठे मेघ को देखकर अलकापुरी में स्थित अपनी प्रिया के लिए सन्देश भेजता है ('आषाढस्य प्रथमदिवसे')।

इस कृति में प्रकृति की भूमिका तीन स्तरों पर प्रकट होती है।

सन्देशवाहक के रूप में काव्य का सबसे साहसिक कल्पना-तत्त्व यही है कि अचेतन मेघ को चेतन दूत बना दिया गया है। कवि स्वयं इस असंगति को जानता है और संकेत करता है कि धूम, ज्योति, जल और वायु का संयोग मेघ में इन्द्रिय-क्षमता कहाँ से लाएगा ('धूमज्योतिःसलिलमरुतां सन्निपातः क्व मेघः')। पर विरह-विह्वल यक्ष के लिए चेतन और अचेतन का भेद मिट जाता है। इस स्थिति

की व्याख्या करते हुए हजारीप्रसाद द्विवेदी और अन्य आलोचक इसे शोक की उस अवस्था का चित्र मानते हैं जहाँ मनुष्य समस्त सृष्टि से सम्बन्ध जोड़ने लगता है [14].

भौगोलिक यात्रा-मानचित्र के रूप में। रामगिरि से अलकापुरी तक का मार्ग, जिसमें आम्रकूट पर्वत, नर्मदा (रेवा), विदिशा, वेत्रवती, उज्जयिनी, चम्बल, देवगिरि, कुरुक्षेत्र, गंगा और कैलास आते हैं, केवल काव्य-कल्पना नहीं, एक पहचाना जा सकने वाला भूदृश्य है। इससे स्पष्ट है कि कवि ने प्रकृति-चित्रण को भारतीय भूगोल और सांस्कृतिक स्मृति से जोड़ा है [15,20]।

भावों के रूप के रूप में। नदी को नायिका, पर्वत को प्रेमी और वर्षा को आलिंगन का रूप देकर कवि प्राकृतिक घटनाओं को मानवीय भावों में रूपान्तरित करता है। उदाहरणार्थ, वेत्रवती नदी का लहरों वाला प्रवाह प्रेमिका की भोंहों की चंचलता जैसा दिखाया गया है, और मेघ के संयोग से नदी का तट-वस्त्र खिसकने का बिम्ब शृंगारिक है।

विशेष बात यह है कि उत्तरमेघ में अलकापुरी का वर्णन पर्यावरण और विलास का आदर्श मिलन प्रस्तुत करता है। वहाँ सभी ऋतुओं के पुष्प एक साथ खिले रहते हैं। यह प्रकृति की उस पूर्णता का चित्र है जिसमें ऋतु-चक्र की विवशता नहीं, केवल सौन्दर्य की सतत उपस्थिति है। यह एक यूटोपियाई प्रकृति है, और आलोचक इसे शास्त्रीय भारतीय कल्पना का आदर्श मानते हैं [14,20].

कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने 'प्राचीन साहित्य' के अपने निबन्ध में मेघदूत को मानवीय विरह और प्रकृति के व्यापक सौन्दर्य का काव्य कहा। उनके अनुसार यह विरह किसी एक यक्ष तक सीमित न रहकर मनुष्य की सार्वभौम पीड़ा का रूप ले लेता है [29].

5.3 कुमारसम्भव: प्रकृति में दिव्यता और सृजन

कुमारसम्भव को परम्परा में सत्रह सर्गों वाला महाकाव्य माना जाता है, यद्यपि प्रामाणिक रूप से कालिदास-रचित अंश प्रायः पहले आठ सर्गों तक स्वीकार किया जाता है [1,3]। यहाँ प्रकृति का सर्वाधिक प्रभावशाली रूप हिमालय के वर्णन में प्रकट होता है।

काव्य 'अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः' जैसी पंक्ति से आरम्भ होता है। यहाँ हिमालय भौगोलिक पर्वत से आगे बढ़कर दैवी और पृथ्वी की मानदण्ड-सी सत्ता बन जाता है। उसमें भोजपत्र, देवदारु, किन्नर, हिमशिखर और सिंह-गुफाओं का चित्र कवि की वन-संवेदना को दर्शाता है।

कुमारसम्भव में प्रकृति की भूमिका कथा-संचालक की भी है। तीसरे सर्ग में शिव की तपस्या के बीच असमय वसन्त का आगमन और उसके प्रभाव का वर्णन दिखाता है कि प्रकृति काव्य में घटना को गति भी देती है। सम्पूर्ण वन-प्रदेश में पुष्प, भ्रमर और मृग सभी कामोदीपन में डूब जाते हैं। किन्तु शिव की योग-शक्ति के सामने यह सृष्टि-उल्लास भी स्थिर हो जाता है, और अन्ततः कामदहन होता है। यहाँ प्रकृति सृजन और संयम, दोनों के द्वन्द्व का रंगमंच है।

पाँचवें सर्ग में पार्वती की तपस्या के अंश में ऋतुओं की कठोरता को सहने वाली पार्वती और प्रकृति के बीच एकात्मता दिखाई देती है। तपस्विनी पार्वती स्वयं उस प्रकृति का अंग बन जाती है जिसे वह सहन करती है। इस प्रकार तप और प्रकृति एक-दूसरे के पूरक हैं। यह भारतीय संस्कृति की उस धारणा से जुड़ा है जहाँ तपोवन मनुष्य और प्रकृति के आध्यात्मिक मिलन का स्थल है [17,23].

5.4 रघुवंश: राजवंश और प्रकृति का सहजीवन

रघुवंश उन्नीस सर्गों का महाकाव्य है और इसमें प्रकृति-चित्रण कथा-प्रवाह के भीतर बिखरा हुआ है, ऋतुसंहार की तरह सर्ग-संरचित नहीं [1,9]। यहाँ प्रकृति सम्राटों के चरित्र और राजधर्म से जुड़कर आती है।

प्रथम-द्वितीय सर्ग में दिलीप द्वारा नन्दिनी गौ की सेवा का प्रसंग वनवासी जीवन और पशु-सेवा की आदर्श व्यवस्था प्रस्तुत करता है। राजा का पशु और वन के प्रति सम्मान उसके राजत्व का अंग है। चतुर्थ सर्ग में रघु की दिग्विजय-यात्रा में नदियों, पर्वतों और देश-भागों का वर्णन राजनीतिक विजय को भौगोलिक मानचित्र से जोड़ता है। तेरहवें सर्ग में लंका से अयोध्या लौटते हुए पुष्पक-विमान से राम सीता को समुद्र, वन और पूर्व-परिचित स्थलों का दर्शन कराते हैं। यहाँ प्रकृति स्मृति-सूत्र है और भूतकालिक घटनाओं का पुनःस्मरण उसी के माध्यम से होता है।

नवें सर्ग में दशरथ की आखेट-कथा और वसन्त-वर्णन प्रकृति के आकर्षण के साथ भावी विपत्ति का पूर्वाभास भी दिखाते हैं। यहाँ प्रकृति की सुन्दरता के साथ अनिष्ट की छाया भी चलती है, जो कवि की जीवन-दृष्टि की जटिलता का संकेत है। सोलहवें सर्ग में कुश के काल में सरयू का वर्णन नदी को नगरी की जीवन्त सत्ता के रूप में दिखाता है।

रघुवंश में प्रकृति की उपस्थिति का एक और आयाम है। वंश-परम्परा में राजा प्रजा के लिए वैसे ही है जैसे सूर्य जल के लिए, अर्थात् राजत्व का आदर्श प्रकृति के परोपकारी रूप से तुलनीय है। इस प्रकार प्रकृति यहाँ नैतिक उपमान भी है [12,24].

5.5 तुलनात्मक संकेत: नाटकों में प्रकृति

यद्यपि पत्र का केन्द्र काव्य है, संक्षिप्त तुलना के लिए शाकुन्तल का उल्लेख उपयोगी है। चतुर्थ अंक में शकुन्तला की विदा के समय कण्व आश्रम के वृक्षों से उसे विदा देने का आग्रह करते हैं। यह मानता है कि जो शकुन्तला जल पिलाने से पहले स्वयं जल नहीं पीती थी, उसके लिए वृक्ष भी सम्बन्धी हैं ('पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या')। यह प्रसंग नाटक और काव्य, दोनों में कालिदास की उस केन्द्रीय धारणा को पुष्ट करता है कि प्रकृति परिवार का अंग है [22,23].

6. प्रकृति-चित्रण के स्वरूप: विषयगत विश्लेषण

पूर्वोक्त कृतिवार अध्ययन के आधार पर कालिदास के प्रकृति-चित्रण को पाँच वर्गों में समझा जा सकता है।

6.1 आलम्बन रूप

जहाँ प्रकृति स्वयं वर्णन का लक्ष्य है, वहाँ वह आलम्बन बनती है। ऋतुसंहार के अधिकांश अंश और कुमारसम्भव के प्रथम सर्ग में हिमालय-वर्णन इसके उदाहरण हैं। ऐसे प्रसंगों में कवि की दृष्टि निरीक्षण-प्रधान है और वर्णन में भौगोलिक और वानस्पतिक सूक्ष्मता दिखती है। साहित्य-समीक्षकों ने इसे कालिदास के कवि-रूप के साथ 'दृष्टा' रूप का मिलन माना है [15,16].

6.2 उद्दीपन रूप

रसशास्त्र में उद्दीपन विभाव वह तत्त्व है जो स्थायी भाव को उत्तेजित करता है [30]। कालिदास के यहाँ वसन्त, वर्षा और चन्द्रिका शृंगार-भाव को उद्दीप्त करते हैं, और मेघदूत में आषाढ़ का मेघ विरह को गहन करता है। किन्तु मेघदूत का वैशिष्ट्य यह है कि उद्दीपन-तत्त्व ही दूत बन जाता है। जो विरह को उभारता है, वही सन्देश ले जाता है। यह भाव-द्वैत काव्य को असाधारण गहराई देता है [14,30].

6.3 मानवीकरण

कालिदास में प्रकृति का मानवीकरण सबसे अधिक प्रयुक्त उपकरण है। नदी नायिका बनती है, पर्वत प्रेमी, ऋतु नववधू, लता आलिंगनोत्सुक स्त्री और मेघ मित्र। इस मानवीकरण की विशेषता यह है कि वह केवल अलंकार नहीं। वह प्रकृति के साथ सम्बन्ध की विश्व-दृष्टि है। कवि प्रकृति को इसलिए मानवीय रूप नहीं देता कि वह निर्जीव है, बल्कि इसलिए कि वह सजीव है और मनुष्य के भावात्मक जीवन का सहभागी है [13,14].

6.4 प्रतीक-योजना

हिमालय स्थिरता और तेज का, मेघ सन्देश और करुणा का, वसन्त काम और सृजन का, तथा तपोवन संयम और शान्ति का प्रतीक है। इन प्रतीकों की विशेषता यह है कि वे एकार्थक नहीं। वसन्त कामोदीपन भी है और शिव के सामने विफलता का कारण भी। इस प्रकार प्रतीक बहुस्तरीय अर्थ-सम्भावना रखते हैं [12,24].

6.5 उपमान-रूप

प्रसिद्ध 'उपमा कालिदासस्य' उक्ति का बड़ा आधार प्रकृति-आधारित उपमाएँ हैं। रघुवंश के आरम्भ में कवि वाक् और अर्थ के अभिन्न सम्बन्ध को पार्वती-परमेश्वर के अभिन्न सम्बन्ध से उपमित करता है ('वागर्थाविव सम्पृक्तौ'), और आगे राजाओं की तुलना सूर्य, चन्द्र, समुद्र, हिमालय और मेघ से की गई है। प्रकृति यहाँ मूल्यों का पैमाना है। श्रेष्ठ राजा प्राकृतिक शक्तियों जैसा उदार और स्थिर है [1,4].

6.6 चारों काव्यों की तुलनात्मक स्थिति

चारों काव्यों की संरचना और प्रकृति-भूमिका का तुलनात्मक सार निम्न रूप में देखा जा सकता है। ऋतुसंहार की सम्पूर्ण छः सर्ग-संरचना प्रकृति-केन्द्रित है। मेघदूत में सम्पूर्ण कथा-यात्रा प्रकृति के माध्यम से चलती है, इसलिए वहाँ भी प्रकृति और कथा एक हैं। कुमारसम्भव में प्रकृति कथा-संचालक शक्ति और आध्यात्मिक प्रतीक बनती है। रघुवंश में वह राजनीतिक-नैतिक सन्दर्भ और स्मृति-सूत्र के रूप में आती है। इस क्रम से स्पष्ट होता है कि कालिदास की कृतियों में प्रकृति की भूमिका वर्णनात्मक से घटनात्मक और फिर वैचारिक सन्दर्भ की ओर विकसित होती गई है। यह विकास-क्रम इस शोध का एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष है, यद्यपि रचना-क्रम के निश्चित कालक्रम पर विद्वानों में मतभेद होने से इसे संकेतात्मक मानना चाहिए [3,5,20].

7. विभिन्न दृष्टिकोणों से विश्लेषण

7.1 रस-सिद्धान्त के दृष्टिकोण से

भारतीय काव्यशास्त्र में रस की निष्पत्ति विभाव, अनुभाव और सञ्चारी भावों के संयोग से मानी गई है, और प्रकृति उद्दीपन विभाव के रूप में स्थान पाती है [30]। नागेन्द्र ने रस-सिद्धान्त की व्याख्या में यह स्पष्ट किया है कि उद्दीपन-सामग्री का चयन कवि की सौन्दर्य-चेतना पर निर्भर है [30]। इस दृष्टि से कालिदास का महत्त्व यह है कि वे उद्दीपन को सहायक भूमिका से उठाकर रस का सक्रिय भागीदार बना देते हैं। आनन्दवर्धन के ध्वनि-सिद्धान्त के अनुसार जब वर्णन व्यंग्यार्थ में रस का संकेत करे, तब वह उत्तम काव्य है [11]। मेघ का मार्ग-वर्णन इसी ध्वनि-गुण का उदाहरण है, क्योंकि प्रत्येक भौगोलिक दृश्य के भीतर यक्ष की स्मृति और पीड़ा की ध्वनि निहित है। हिरियन्ना ने कला-अनुभव की व्याख्या में सौन्दर्य के साधारणीकरण को रस का मूल माना है [31]। कालिदास की प्रकृति में साधारणीकरण अधिक सहज इसलिए है कि प्रकृति सार्वभौम अनुभव है।

7.2 पारिस्थितिक दृष्टिकोण से

आधुनिक पारिस्थितिक आलोचना साहित्य में प्रकृति की स्वतन्त्र गरिमा को देखती है [25]। कालिदास के काव्यों में इस दृष्टि के लिए पर्याप्त सामग्री है, विशेषतः कण्व-आश्रम के पौधों को परिवार मानने वाले प्रसंग, नन्दिनी गौ की सेवा में राजा का कर्तव्य और पार्वती-तप में प्रकृति-सहअस्तित्व [22,23]। मनुष्य की श्रेष्ठता या उपभोग की दृष्टि कहीं नहीं मिलती। जिम्मेरमान का अध्ययन दिखाता है कि भारतीय चिन्तन में जल, वनस्पति और पशु-जगत को जीवन-तन्त्र के अंग के रूप में समझा गया था [26]। कालिदास इस बोध के काव्यात्मक साक्षी हैं।

परन्तु सावधानी आवश्यक है। कालिदास को आधुनिक अर्थ में 'पर्यावरणवादी' कहना कालक्रम-दोष (anachronism) होगा। उनकी प्रकृति-संवेदना पर्यावरण-नीति का प्रतिपादन नहीं है। वह सौन्दर्य, धर्म और सहअस्तित्व की सांस्कृतिक चेतना है। गाडगिल-गुहा का सुझाव भी यही है कि भारतीय इतिहास में मनुष्य-प्रकृति सम्बन्ध जटिल और अनेक-स्तरीय रहा है, उसे किसी एकांगी आदर्शीकरण में नहीं बाँधना चाहिए [27]। अतः पारिस्थितिक पाठ एक उपयोगी पठन-दृष्टि है, कवि का घोषित उद्देश्य नहीं।

7.3 सांस्कृतिक-ऐतिहासिक दृष्टिकोण से

मेघदूत का मार्ग-चित्रण, कुमारसम्भव का हिमालय-वर्णन और रघुवंश की दिग्विजय-यात्रा दिखाते हैं कि प्रकृति का चित्रण भारतीय सांस्कृतिक भूगोल का निर्माण भी है। दिनकर के अनुसार भारतीय संस्कृति ने भौगोलिक विस्तार में एकता की पहचान की है [17], और कालिदास का काव्य इस एकता को दृश्य रूप देता है। थापर का तर्क है कि आश्रम और वन का चित्रण सामाजिक-राजनीतिक अर्थ भी रखता है, क्योंकि वह राजसत्ता और तपोवन की सम्बन्ध-सीमाओं को भी परिभाषित करता है [23]। पोल्लॉक की स्थापना के अनुसार संस्कृत काव्य की परिष्कृत भाषा और प्रकृति-वर्णन की कलात्मकता दरबारी-सांस्कृतिक अभिजात्य से जुड़ी थी [24]। इस कारण कालिदास की प्रकृति एक ओर सार्वभौम है, दूसरी ओर एक विशेष सामाजिक वर्ग की सौन्दर्य-चेतना की उपज भी है। इस द्वन्द्व को स्वीकार करना ही आलोचनात्मक ईमानदारी है।

7.4 तुलनात्मक दृष्टिकोण से

तमिल संगम-कविता में पाँच भूदृश्य-प्रकार, जैसे कुरिञ्जि (पहाड़ी) और मुल्लै (वन-प्रदेश), प्रेम की विशिष्ट अवस्थाओं से बँधे हैं [28]। संस्कृत काव्य में यह बन्धन भूदृश्य के बजाय ऋतु के साथ अधिक दिखता है। कालिदास इस परम्परा के भीतर भी नवोन्मेष करते हैं, क्योंकि मेघदूत में यात्रा के साथ भूदृश्य बदलता जाता है और भाव भी उसी के साथ गतिशील होता है। इस अर्थ में प्रकृति यहाँ स्थिर संकेत नहीं, प्रक्रिया है। वह भाव-यात्रा का सहचर बनकर चलती है। इसी कारण कालिदास का पाठ अपनी परम्परा से जुड़ा भी है और उससे आगे भी जाता है [21,28]।

7.5 ग्रहण-सिद्धान्त और आधुनिक पुनर्पाठ

रवीन्द्रनाथ के निबन्ध और मोहन राकेश के नाटक दिखाते हैं कि कालिदास की प्रकृति पीढ़ी-दर-पीढ़ी नई अर्थ-सम्भावनाएँ देती रही है [18,29]। टैगोर के लिए मेघदूत सार्वभौम विरह का काव्य है, और राकेश के लिए 'आषाढ़' रचनाकार के आन्तरिक द्वन्द्व का रूपक। द्विवेदी 'एक पुरानी कहानी' कहकर उसे मानवीय अनुभव की सतत नवीनता में पढ़ते हैं [14]। ग्रहण की यह परम्परा सिद्ध करती है कि कालिदास की प्रकृति बहु-अर्थी है, और यही उसकी कालजयिता का एक आधार है।

7.6 सम्भावित आपत्तियाँ और उनका उत्तर

कुछ आलोचकों की आपत्ति है कि कालिदास की प्रकृति अत्यधिक शृंगारिक और मानव-केन्द्रित है, इसलिए उसमें प्रकृति की स्वतन्त्र सत्ता कम दिखती है। इसका उत्तर दो स्तरों पर दिया जा सकता है। पहला, मानवीकरण प्रकृति को छोटा नहीं करता, बल्कि उसे सम्बन्ध का भागीदार बनाता है। दूसरा, कुमारसम्भव के हिमालय-वर्णन और रघुवंश के नदी-चित्रों में प्रकृति अपनी विराटता में भी उपस्थित है, जहाँ मानवीय सन्दर्भ गौण है। अतः कालिदास के यहाँ प्रकृति न पूर्णतः मानव-अधीन है, न पूर्णतः मानव-निरपेक्ष। वह सम्बन्धात्मक है।

8. मुख्य निष्कर्ष

अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उभरते हैं।

- 1. बहुस्तरीय भूमिका।** कालिदास के काव्यों में प्रकृति एक साथ आलम्बन, उद्दीपन, मानवीकृत सहचर, प्रतीक और उपमान है। उसकी भूमिका को किसी एक श्रेणी में बाँधना सम्भव नहीं।
- 2. कृति-क्रम में विकास।** ऋतुसंहार की वर्णन-प्रधान प्रकृति से मेघदूत की कथा-वाहक प्रकृति, कुमारसम्भव की सृजन-संयम की द्वन्द्वात्मक प्रकृति और रघुवंश की नैतिक-सांस्कृतिक प्रकृति तक एक वैचारिक विस्तार दिखता है।
- 3. रस और प्रकृति की अभिन्नता।** कालिदास की विशेषता यह है कि वे उद्दीपन-सामग्री को रस का सक्रिय भागीदार बना देते हैं, जो साहित्यशास्त्र के सामान्य नियम से अधिक है।
- 4. यथार्थ और कल्पना का समन्वय।** भौगोलिक और वानस्पतिक सूक्ष्मता प्रत्यक्ष अवलोकन का संकेत देती है, और अलकापुरी-जैसी आदर्श प्रकृति कल्पना का। दोनों का सहअस्तित्व उनकी कला का विशिष्ट गुण है।
- 5. सहअस्तित्व की चेतना।** मनुष्य और प्रकृति के बीच अन्तर्निर्भरता का भाव समग्र काव्य में व्याप्त है, पर इसे आधुनिक पर्यावरणवाद से समीकृत करना अनुचित होगा। यह सांस्कृतिक-नैतिक चेतना है।
- 6. पूर्व-शोध का समेकन।** हिन्दी आलोचना ने भाव-सौन्दर्य, प्राच्यविद्या ने ऐतिहासिक-सांस्कृतिक सन्दर्भ और पारिस्थितिक विमर्श ने प्रकृति की स्वतन्त्र सत्ता को उभारा है। ये दृष्टियाँ एक-दूसरे की विरोधी नहीं, पूरक हैं।

9. सीमाएँ और भावी शोध-दिशाएँ

इस अध्ययन की कुछ सीमाएँ हैं। पहली, कालिदास का काल, रचना-क्रम और कुछ पाठों की प्रामाणिकता (जैसे कुमारसम्भव के परवर्ती सर्ग) विवादित हैं, इसलिए विकास-क्रम सम्बन्धी निष्कर्ष सावधानी से लिए जाने चाहिए। दूसरी, अध्ययन का आधार पाठ-विश्लेषण है, जिसमें व्याख्या का तत्त्व अनिवार्य है। तीसरी, यहाँ नाटकों को केवल तुलनात्मक सन्दर्भ में लिया गया है।

भावी शोध के लिए कुछ दिशाएँ सुझाई जा सकती हैं। कालिदास की वनस्पति-शब्दावली का वनस्पति-विज्ञान और आयुर्वेदिक ग्रन्थों के साथ तुलनात्मक अध्ययन हो सकता है। प्राकृत, अपभ्रंश और आधुनिक हिन्दी कविता में कालिदासीय प्रकृति-परम्परा की निरन्तरता का सर्वेक्षण हो सकता है। इसके अतिरिक्त, पाठ-परम्परा के विविध संस्करणों में प्रकृति-सम्बन्धी पाठान्तरों का विश्लेषण भी उपयोगी होगा।

10. उपसंहार

कालिदास के काव्यों का प्रकृति-चित्रण भारतीय काव्य-परम्परा की उस चेतना का उत्कृष्ट उदाहरण है जिसमें मनुष्य और सृष्टि का सम्बन्ध द्वैत नहीं, संवाद है। ऋतुसंहार में यह संवाद ऋतु-चक्र के साथ चलता है, मेघदूत में मेघ और नदियों के साथ, कुमारसम्भव में हिमालय और तपोवन के साथ, और रघुवंश में राजधर्म और भूगोल के साथ। इन सभी रूपों में प्रकृति सजीव, सम्बन्धात्मक और अर्थगर्भित है।

समीक्षात्मक दृष्टि से देखने पर यह भी स्पष्ट होता है कि कालिदास की प्रकृति एक साथ सार्वभौम और ऐतिहासिक है। वह सार्वभौम इसलिए है कि उसमें सभी मनुष्यों के विरह, प्रेम और सौन्दर्य-बोध को स्वर मिलता है, और ऐतिहासिक इसलिए कि उसमें अपने युग के सांस्कृतिक-सामाजिक सन्दर्भ भी अंकित हैं। यह द्वैत उनकी कला को सीमित नहीं करता, बल्कि उसकी गहराई का स्रोत है। इसी कारण सहस्राब्दी बीत जाने पर भी उनकी प्रकृति-दृष्टि हमें केवल प्राचीन सौन्दर्य के साक्षात्कार का अवसर नहीं देती, आज के मनुष्य को प्रकृति के साथ अपने सम्बन्ध पर पुनर्विचार का निमन्त्रण भी देती है।

सन्दर्भ सूची

1. Upadhyaya B. संस्कृत साहित्य का इतिहास [Sanskrit Sahitya ka Itihas]. Varanasi: Sharada Mandir; 1978.
2. Dwivedi KD. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास [Sanskrit Sahitya ka Samikshatmak Itihas]. Varanasi: Vishvavidyalaya Prakashan; 2000.
3. Gairola V. संस्कृत साहित्य का इतिहास [Sanskrit Sahitya ka Itihas]. Varanasi: Chaukhamba Vidyabhawan; 1993.
4. Macdonell AA. A History of Sanskrit Literature. London: William Heinemann; 1900.
5. Keith AB. A History of Sanskrit Literature. Oxford: Oxford University Press; 1928.
6. Ryder AW. Kalidasa: Translations of Shakuntala and Other Works. London: J. M. Dent; 1912.
7. Buell L. The Environmental Imagination: Thoreau, Nature Writing, and the Formation of American Culture. Cambridge (MA): Harvard University Press; 1995.
8. Zimmermann F. The Jungle and the Aroma of Meats: An Ecological Theme in Hindu Medicine. Berkeley: University of California Press; 1987.
9. Dwivedi R, editor. कालिदास ग्रन्थावली [Kalidasa Granthavali]. Varanasi: Banaras Hindu University; 1976.
10. Kale MR. The Meghaduta of Kalidasa. Delhi: Motilal Banarsidass; 1979.
11. Ingalls DHH, Masson JM, Patwardhan MV, translators. The Dhvanyaloka of Anandavardhana with the Locana of Abhinavagupta. Cambridge (MA): Harvard University Press; 1990.
12. Kane PV. History of Sanskrit Poetics. Delhi: Motilal Banarsidass; 1971.
13. Dwivedi HP. कालिदास की लालित्य योजना [Kalidasa ki Lalitya Yojana]. New Delhi: Rajkamal Prakashan; 1965.
14. Dwivedi HP. मेघदूत: एक पुरानी कहानी [Meghaduta: Ek Purani Kahani]. New Delhi: Rajkamal Prakashan; 1957.
15. Upadhyaya BS. कालिदास का भारत [Kalidasa ka Bharat]. Varanasi: Bharatiya Jnanpith; 1963.
16. Shukla R. चिन्तामणि, भाग 1 [Chintamani, Part 1]. Kashi: Nagari Pracharini Sabha; 1939.

17. Dinkar RS. संस्कृति के चार अध्याय [Sanskriti ke Char Adhyay]. Allahabad: Udayachal; 1956.
18. Rakesh M. आषाढ़ का एक दिन [Ashadh ka Ek Din]. New Delhi: Rajpal & Sons; 1958.
19. Winternitz M. A History of Indian Literature. Vol. 3. Delhi: Motilal Banarsidass; 1985.
20. Mirashi VV. Kalidasa: Date, Life and Works. Bombay: Popular Prakashan; 1969.
21. Ingalls DHH. An Anthology of Sanskrit Court Poetry: Vidyakara's Subhasitaratnakosa. Cambridge (MA): Harvard University Press; 1965.
22. Miller BS, editor. Theater of Memory: The Plays of Kalidasa. New York: Columbia University Press; 1984.
23. Thapar R. Sakuntala: Texts, Readings, Histories. New Delhi: Kali for Women; 1999.
24. Pollock S. The Language of the Gods in the World of Men: Sanskrit, Culture, and Power in Premodern India. Berkeley: University of California Press; 2006.
25. Buell L. The Environmental Imagination: Thoreau, Nature Writing, and the Formation of American Culture. Cambridge (MA): Harvard University Press; 1995.
26. Zimmermann F. The Jungle and the Aroma of Meats: An Ecological Theme in Hindu Medicine. Berkeley: University of California Press; 1987.
27. Gadgil M, Guha R. This Fissured Land: An Ecological History of India. Delhi: Oxford University Press; 1992.
28. Ramanujan AK. Poems of Love and War: From the Eight Anthologies and the Ten Long Poems of Classical Tamil. New York: Columbia University Press; 1985.
29. Tagore R. प्राचीन साहित्य [Prachin Sahitya]. Calcutta; 1907.
30. Nagendra. रस सिद्धान्त [Ras Siddhant]. Delhi: National Publishing House; 1964.
31. Hiriyananna M. Art Experience. Mysore: Kavyalaya Publishers; 1954.